श्रीअरविंद - एक संक्षिप्त परिचय

श्रीअरविंद का जन्म १५ अगस्त, १८७२ को कलकत्ता में हुआ था | सात वर्ष की आयु में उन्हें शिक्षा के लिये इंग्लैंड भेजा गया । उन्होंने अल्पायु से ही काव्य-लेखन आरम्भ कर दिया था | लन्दन के सेंट पॉल और कैम्ब्रिज के किंग्स कॉलेज में अपने प्रतिभा-संपन्न विद्यार्थी-जीवन के दौरान उन्होंने न केवल अंग्रेजी में बल्कि ग्रीक, लैटिन और फ्रेंच भाषा में भी दक्षता प्राप्त की तथा जर्मन, इतालवी और स्पैनिश भाषाओं का भी ज्ञान प्राप्त किया | इंग्लैण्ड में १४ वर्ष तक रह कर अध्ययन करते हुए उन्होंने प्राचीन, मध्य-युगीन तथा आधुनिक यूरोप की संस्कृति का अन्तरंग परिचय प्राप्त किया |

१८९३ में २१ वर्ष की आयु में श्रीअरविन्द पूर्णतः पाश्चात्य शिक्षा प्राप्त करने के बाद भारत लौटे । तब उन्होंने पूर्वीय सत्य और ज्ञान की जिज्ञासा की ओर ध्यान दिया । उन्होंने संस्कृत तथा अन्य अनेक आधुनिक भारतीय भाषाएँ सीखीं तथा भारतीय सभ्यता के सभी अंगोपांगों को आत्मसात् किया । उन्होंने बड़ौदा में १३ वर्ष उस राज्य की प्रशासनिक तथा शैक्षिक सेवा में बिताए | ये आत्म-परिष्करण और साहित्यिक गतिविधियों के वर्ष थे | परन्तु इस अवधि के अंतिम वर्षों में उन्होंने अवकाश लेकर अधिकांशतः अपना समय चुपचाप राजनैतिक गतिविधियों में व्यतीत किया ।

१९०६ में, ३४ वर्ष की अवस्था में, श्रीअरविन्द बंगाल नैशनल कॉलेज के प्रिंसिपल नियुक्त होकर कलकत्ता आ गए । लेकिन कुछ ही समय बाद उन्होंने भारतीय स्वाधीनता-संग्राम में खुल कर भाग लेने के लिए उस पद से इस्तीफा दे दिया | वे नेशनलिस्ट पार्टी के नेता बन गए और 'बंदेमातरम्' पत्रिका में प्रकाशित उनके संपादकीय लेखों ने उन्हें अविलंब अखिल भारतीय ख्याति प्रदान की । चार वर्ष से भी कम अवधि में उन्होंने कांग्रेस के नरमपंथी एवम् प्रभावहीन दृष्टिकोण को क्रांतिकारी स्वरुप प्रदान किया, राष्ट्रीय-चेतना में पूर्ण स्वाधीनता के लक्ष्य को बद्धमूल किया तथा स्वातंत्र्य आंदोलन को एक नयी दिशा प्रदान की । भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के सुप्रसिद्ध इतिहास लेखक डॉ. पट्टाभि सीतारामैया ने लिखा है कि यद्यपि वे उच्चाकाश में कुछ ही समय तक रहे, उन्होंने अपने आलोक से आसेतु-हिमालय भारत भूमि को जाज्ज्वल्यमान बना दिया ।

श्रीअरविन्द को १९०८ से १९०९ तक ब्रिटिश सरकार ने अलीपुर जेल में नजरबन्द रखा । यह घटना बहुत महत्वपूर्ण सिद्ध हुई क्योंकि इसी अवधि में श्रीअरविन्द को अनेक ऐसे निर्णायक आध्यात्मिक अनुभव प्राप्त हुए जिन्होंने उनके आसन्न कार्यों की दिशा स्थिर कर दी । १९१० में, स्वतंत्रता-संग्राम की अंततः सफलता से आश्वस्त होकर एवम् आंतरिक पुकार के प्रत्युत्तर-स्वरूप, श्रीअरविन्द राजनैतिक कार्यक्षेत्र से हट गये तथा पांडिचेरी आ गए जिससे वे पूरी तरह अपने आध्यात्मिक कार्य की ओर ध्यान दे सकें ।

१९१४ में, सुशांत योग के चार वर्षों के उपरान्त, उन्होंने दार्शनिक पत्रिका 'आर्य' का प्रकाशन आरंभ किया जिसके माध्यम से उन्होंने मानवता के लिए अपने नवीन सन्देश का उद्घाटन किया | 'आर्य में उनके द्वारा लिखे लेख बाद में विभिन्न शीर्षकों के अंतर्गत प्रकाशित हुए - मानव दिव्य नियति ('दिव्य-जीवन'), उसकी उपलब्धि का मार्ग ('योग-समन्वय'), मानव समाज का दिव्य भविष्य की ओर संचरण ('मानव-चक्र'), मानव की एकता की अनुभूति ('मानव एकता का आदर्श'), भारतीय आध्यात्म और सभ्यता का महत्व एवम् आंतरिक अभिप्राय ('भारतीय संस्कृति के आधार', 'वेद रहस्य', 'उपनिषद्', 'गीता प्रबंध') और काव्य की प्रकृति और विकास ('भविष्य की कविता') । 'सावित्री - एक कथा और एक प्रतीक' उनकी महानतम काव्य रचना है, जो मुक्त छंद में २३,८५६ पंक्तियों का महाकाव्य है ।

श्रीअरविन्द ने इसी धरा पर दिव्य जीवन की कल्पना की और उसे साकार बनाने के लिए प्रयास किया । वे चालीस वर्ष तक पांडिचेरी में अपने इस आध्यात्मिक ध्येय की पूर्ति में संलग्न रहे । साथ ही, उन्होंने भारत में और विश्व में होने वाली घटनाओं पर बारीकी से निगाह रखी और जब कभी आवश्यक समझा, केवल आध्यात्मिक शक्ति तथा निःशब्द आध्यात्मिक क्रिया द्वारा उनमें सक्रिय हस्तक्षेप किया । ५ दिसंबर, १९५० को श्रीअरविन्द ने अपनी देह त्याग दी | आज भी विश्व भर से अधिकाधिक लोग उनके अंतर्दर्शन और आदर्शों से आकर्षित हो, उनकी ओर खींचते आ रहे हैं ।

श्रीअरविन्द की शिक्षा:

उनके व्यक्तित्व के समान ही उनकी शिक्षा भी बहुमुखी और सर्वग्राही है, परंतु विकासमान आध्यात्मिक एवम् दिव्य नियति की उनकी केंद्रीय परिकल्पना उसे एक-सूत्रता प्रदान करती है । उनकी परिकल्पना के अनुसार प्रकृति में एक आरोहणात्मक विकास पाया जाता है जो प्रस्तर से वनस्पति तक, वनस्पति से पशु तक और पशु से मानव तक देखा जा सकता है । और चूँकि मनुष्य आरोहणात्मक विकास की अद्यतन अंतिम कड़ी है, वह यह मान लेता है कि वह आरोहण की चरम सीमा तक पहुंच चुका है और विश्वास कर लेता है कि धरती पर उससे अधिक श्रेष्ठ और कोई जीव नहीं हो सकता । लेकिन यह उसकी भूल है । अपनी भौतिक प्रकृति में वह अभी भी प्रायः पशु ही है - एक विचारवान् एवम् वाचाल पशु अपनी भौतिक आदतों में और नैसर्गिक बोध में पशु ही है । निःसंदेह प्रकृति इस प्रकार की अपूर्णता से संतुष्ट नहीं हो सकती और वह एक ऐसी सत्ता का निर्माण करने का प्रयास कर रही है जो मनुष्य के सन्दर्भ में वैसा होगा जैसा कि पशु के सन्दर्भ में मनुष्य है, अर्थात एक ऐसी सत्ता जो अपने बाह्य रूप में तो मनुष्य का आकार ग्रहण करती होगी, परंतु फिर भी जिसकी चेतना मानसिक स्तर से कहीं ऊपर उठेगी और जो अज्ञान की दासता से मुक्त होगी ।

मनुष्य एक संक्रमणात्मक सत्ता है जो मानसिक चेतना में निवास करती है लेकिन जिसमें एक नयी चेतना अर्थात् सत्य-चेतना की अभिव्यक्ति की संभावनाएं हैं और जो एक सर्वांशतः समरस, शिव एवम् सुन्दर, प्रसन्न एवम् पूर्ण चैतन्य जीवन जीने में समर्थ है । अपने समग्र जीवन-काल में श्रीअरविन्द ने अपना सम्पूर्ण समय धरती पर उक्त चेतना को, जिसे उन्होंने अतिमानसिक चेतना कहा, स्थापित करने में तथा जो लोग उनके निकट रह कर उस चेतना को मूर्त करने में संलग्न थे उनकी सहायता करने में दिया । क्योंकि सभी लोगों द्वारा युगों-युगों से जिस पूर्णता का स्वप्न देखा गया है, जिस पुनर्निर्माण की कल्पना की गयी है, व्यक्ति के सन्दर्भ में ही नहीं बल्कि समाज को भी दिव्यता के ताने-बाने में बुनने के लिए, वह अतिमानस के अवतरण से ही संभव हो सकता है ।

श्रीअरविन्द का उद्देश्य किसी एक धर्म का विकास करना या प्राचीन धर्मों का सामंजस्य करना अथवा कोई नया धर्म प्रवर्तित करना नहीं था क्योंकि इनमें से प्रत्येक उनके केंद्रीय ध्येय से अलग ले जाने वाला सिद्ध होगा । उनके योग का एक मात्र उद्देश्य है एक ऐसा आंतरिक आत्म-विकास जिसके द्वारा इस योग का प्रत्येक साधक कालांतर में सभी में एक ही परम आत्मा का दर्शन कर सके और मानसिक स्तर से ऊपर की उस चेतना को उपलब्ध कर सके जो मानव प्रकृति को दिव्यता में रूपांतरित करने में समर्थ है ।

श्रीअरविन्द के विषय में श्रीमाँ के वचन:

श्रीअरविन्द हम से यह कहने आये थे कि "सत्य की उपलब्धि के लिए हमें धरती का त्याग करने की आवश्यकता नहीं, आत्मोपलब्धि के लिए हमें जीवन का त्याग करने की जरुरत नहीं, भगवान् से सम्बन्ध स्थापित करने के लिए हमें संसार छोड़ने या सीमित विश्वासों को ही लेकर चलने की अपरिहार्यता नहीं । भगवान् सर्वत्र हैं, सभी कुछ में हैं, और यदि वे अव्यक्त हैं तो इसीलिए कि हम उन्हें व्यक्त करने के लिए प्रयास नहीं करते ।"

श्रीमाँ और उनका ध्येय

श्रीमाँ का जन्म २१ फ़रवरी १८७८ को पेरिस में हुआ था । जब वे बहुत छोटी थीं तब भी उन्हें असाधारण स्वप्न, अंतर्दर्शन और आध्यात्मिक अनुभव हुआ करते थे | वे निरंतर यह महसूस करती थीं की उन्हें कोई विशिष्ट कार्य संपन्न करना है और इस धरती पर एक विशेष ध्येय की पूर्ति करनी है । वे बड़ी कुशाग्रबुद्धि विद्यार्थिनी थीं और उन्होंने चित्रकला तथा संगीत में बड़ी निपुणता प्राप्त की थी । बीसवीं शताब्दी के आरंभिक वर्षों में वे अल्जीरिया गयीं, जहाँ उन्होंने गुह्यविद्या का गहन ज्ञान प्राप्त किया ।

भगवान् के प्रति आकर्षण का उनके जीवन में सदैव सर्वोपरि स्थान रहा और पेरिस में उनके इर्द-गिर्द तीव्र जिज्ञासुओं एवम् आदर्शवादियों का एक समूह केंद्रित होता गया और एक गहन आंतरिक आध्यात्मिक जीवन की अभीप्सा का क्रम आगे बढ़ने लगा | इसके साथ-साथ श्रीमाँ को समय-समय पर ऐसे अंतर्दर्शन होते रहे जिनमें उन्हें आध्यात्मिक विभूतियों का मार्गदर्शन मिलता रहा । इनमें से अनेक व्यक्तियों से कालांतर में उनकी भेंट भी हुई । इन विभूतियों में से विशेषतः एक को वे गीता के श्रीकृष्ण मानती थीं । जब २१ मार्च १९१४ को वे पांडिचेरी पधारीं तो उन्होंने पहली ही दृष्टि में श्रीअरविन्द को अपने अंतर्दर्शन में प्रकट होने वाले श्रीकृष्ण के रूप में पहचाना और यह जाना कि उनका स्थान और उनका कार्य श्रीअरविन्द के साथ भारत में है । अगले ही दिन उन्होंने लिखा ('प्रार्थना और ध्यान'), "यदि हजारों लोग अज्ञान के अन्धकार में डूबे हों, तो भी क्या ? उनकी उपस्थिति ही यह सिद्ध कर दिखाने को पर्याप्त है कि एक दिन ऐसा आएगा जब अन्धकार प्रकाश में बदल जायेगा और हे प्रभु ! तेरा साम्राज्य इस धरती पर स्थापित होगा | "

उन्होंने मासिक पत्रिका 'आर्य' के प्रकाशन में श्रीअरविन्द को अपना सहयोग दिया । लेकिन कुछ माह बाद ही प्रथम विश्व-युद्ध की परिस्थितियों के कारण उन्हें फ्रांस वापस जाना पड़ा । १९१६ में वे जापान गयीं और वहां से १९२० में फिर पांडिचेरी आ गईं ।

आरंभ से ही श्रीअरविंद की परिकल्पना को साकार करने का कार्य श्रीमाँ को सौंप दिया गया । एक ऐसे नए विश्व, नयी मानवता और नये समाज के निर्माण का कार्य उन्होंने आरम्भ किया जिसमें नयी चेतना अभिव्यक्त एवम् मूर्त हो । स्वभावतः यह एक ऐसा सामूहिक आदर्श था जिसको समन्वित मानवीय पूर्णता के रूप में साकार करने के लिये सामूहिक प्रयास की अपेक्षा थी ।

इस लक्ष्य की प्राप्ति की दिशा में पहली मंजिल 'आश्रम' रहा | जिसकी स्थापना और निर्माण श्रीमाँ ने किया । दूसरी मंजिल 'ऑरोविल' है जो अधिक बाह्य स्वरूप है और जिसका उद्देश्य आत्मा और शरीर, पुरुष और प्रकृति तथा स्वर्ग और धरती के बीच समरसता स्थापित करने वाले सामूहिक जीवन को संभव बनाने का प्रयास करना है ।

१७ नवम्बर, १९७३ को श्रीमाँ ने अपना शरीर त्याग दिया परंतु उनकी चेतना और उनकी उपस्थिति पूर्ववत् ही अनुभव की जाती है और उनके द्वारा विनिर्मित सृष्टि उनके सतत मार्ग दर्शन एवम् प्रेरणा से विकास की ओर अग्रसर है ।

श्रीमाँ अपने विषय में :

"जन्म और प्रारम्भिक शिक्षा के नाते मैं फ्रांसीसी हूँ परन्तु प्रवृति और अभिरूचि के नाते मैं भारतीय हूँ | मेरी चेतना में इन दोनों में कोई विरोध नहीं हैं बल्कि, इसके विपरीत उनका प्रत्युत्म सामंजस्य है और वे एक दूसरे के पूरक हैं | मैं यह भी जानती हूँ कि मैं दोनों ही को एक समान रूप से अपनी सेवाएं अर्पित कर सकती हूँ क्योंकि मेरे जीवन का एकमात्र लक्ष्य है श्रीअरविंद की महान् शिक्षाओं को मूर्त रूप प्रदान करना और श्रीअरविंद अपनी वाणी द्वारा यह तथ्य उजागर करते हैं कि सभी राष्ट्र तत्वत: एक हैं और संगठित तथा समरसतापूर्ण वैविध्य द्वारा वे धरती पर भागवत ऐक्य को ही अभिव्यक्त करने के निमित्त निर्मित हैं |"

श्रीअरविन्द-आश्रम

श्रीअरविन्द-आश्रम का विकास श्रीअरविन्द और श्रीमाँ के आदर्शों के सहज प्रवाह एवं अभिव्यक्ति का परिणाम है । प्रारम्भ में श्रीअरविन्द के कुछ थोड़े-से सहयोगी ही पारिवारिक भाव से साथ रहते थे । जैसे-जैसे वर्ष व्यतीत होते गए, अधिकाधिक लोग श्रीअरविन्द के नये मानव की परिकल्पना के प्रति आकर्षित होते गए | १९२० में जब श्रीमाँ अंतिम रूप से पांडिचेरी आ गयीं, लोगों की संख्या बड़ी तेजी से बढ़ने लगी और एक सामूहिक आध्यात्मिक जीवन मूर्त रूप लेने लगा ।

प्रायः आश्रम का यह अर्थ लगाया जाता है कि यह कोई अलग-थलग और एकान्तवास वाला स्थान होगा जहाँ यति और तपस्वी निवास करते होंगे । परंतु वैदिक काल में अथवा उपनिषद् एवं महाकाव्यों के युग में इस शब्द का उक्त अभिप्राय नहीं होता था । श्रीअरविन्द ने संन्यास अथवा तितिक्षा को उनके सामान्यतः ग्राह्य अर्थों में अपने योग का अंग कभी स्वीकार नहीं किया | अत: पांडिचेरी स्थित श्रीअरविंद-आश्रम, आश्रमों के बारे में प्रचलित विचारों से बिलकुल भिन्न है ।

आश्रम गुरु का निवास होता था जिसके आस-पास सभी आयु-वर्ग के लोग, प्रायः पुरुष और स्त्रियां दोनों ही, विभिन्न प्रकार के ज्ञान की जिज्ञासा लेकर एकत्र हुआ करते थे । गुरु, एक पिता के समान, उनकी देख-भाल किया करता था, उन्हें अपना सर्वोच्च ज्ञान देता था और उचित समय पर उन्हें अपने भावी विकास का मार्ग चुनने के लिये अनुमति देता था । इस प्रकार आश्रम एक महानतर एवम् व्यापकतर आधार पर एक परिवार के समान होता था । उसके पीछे प्रेरणा यह नहीं होती थी कि वह अनुर्वर वैराग्य का स्थान है अपितु यह कि वहाँ रह कर जीवन और उसकी सभी संभावनाओं को सहर्ष स्वीकारा जाता था ।

श्रीअरविन्द-आश्रम उपर्युक्त व्यापक एवं जीवंत अर्थों में एक आश्रम है । यहाँ रहने वाले साधक एक ऐसे जीवन के अन्वेषी और अभीप्सु हैं जो आध्यात्मिक अनुभूति पर आधारित हो और उसका उद्देश्य इस धरती पर और भौतिक अस्तित्व के अंतर्गत दिव्य जीवन की उपलब्धि हो । यहाँ चेतना और प्रकृति के परिवर्तन को महत्त्व दिया जाता है जिससे मानवता और समाज को विकास के आगामी उच्चतर स्तर के लिये तैयार किया जा सके । श्रीअरविन्द-आश्रम की सभी गतिविधियों की केंद्रीय प्रेरणा उक्त विश्वास या सत्य है । इन गतिविधियों में ऐसे सेवा-कार्य हैं जो एक बृहद समुदाय की सुविधा के लिये आवश्यक हैं । इनमें कृषि, उद्योग, कार्यशाला तथा अंतर्राष्ट्रीय शिक्षा-केंद्र शामिल हैं ।

प्रत्येक आश्रमवासी अपने लिये उपयुक्त कार्य का चुनाव करता है और उसे निःस्वार्थ सेवा भाव तथा पूर्णता के साथ संपन्न करता है । ऐसा करते हुए वह इस बात को कभी नहीं भूलता कि उसका उद्देश्य सर्वांगीण रूपांतरण है ।

श्रीअरविन्द-सोसायटी

श्रीअरविन्द-सोसायटी का मुख्य उद्देश्य श्रीअरविन्द और श्रीमाँ की शिक्षाओं पर आधारित एक आध्यात्मिक समाज और एक नये विश्व के लिए कार्य करना है । इसकी स्थापना १९६० में उन व्यक्तियों एवं संस्थाओं को एक जुट करने के लिए हुई थी जो उक्त आदर्श से प्रेरित थे ताकि वे व्यक्तिगत तथा सामूहिक रूप में विश्व भर में उस आदर्श को प्रभावी ढंग से मूर्त रूप दे सकें ।

यह प्रयास तीन दिशाओं में हो रहा है:

1. व्यक्ति का समन्वित विकास और उसकी पूर्णता ।

2. सामाजिक रूपांतरण एवं सामूहिक जीवन का ऐसा विकास जिससे उसके अंतर्गत प्रत्येक व्यक्ति ऐसा स्थान पा सके जिसके लिये वह सर्वाधिक उपयुक्त है तथा इस प्रकार मानवता के विकास और पूर्णता के लिये अपना योगदान देने वाला शक्ति-स्रोत बन सके ।

3. समरसतापूर्ण और सुसंगठित वैविध्य के अंतर्गत ऐसी मानव एकता की उपलब्धि जिससे प्रत्येक राष्ट्र अपनी वास्तविक प्रतिभा के प्रति सचेतन बन सके तथा सम्पूर्ण मानवता के लिये अपना सर्वोत्तम योगदान दे सके ।

यह देखते हुए कि सोसायटी का उद्देश्य सम्पूर्ण जीवन का रूपांतरण है उसके व्यापक कार्यक्रम के दायरे में सभी प्रकार की गतिविधियां आ जाती हैं । सोसायटी 'संयुक्त राष्ट्र शिक्षा विज्ञान संस्कृति संगठन - यूनेस्को' की सदस्य है और भारत सरकार द्वारा उसे सामाजिक विज्ञान में शोध की संस्था के रूप में मान्यता मिली है ।

श्रीअरविन्द ने कहा है, "अगर हम सर्वत्र अलग-थलग रहें तो भी, निस्संदेह, कुछ न कुछ किया जायेगा । लेकिन अगर हम एक समूह के अंग के रूप में रहें तो अपेक्षतः सौ गुना अधिक किया जा सकेगा ।" सोसायटी का यही उद्देश्य है कि उन सब स्त्री-पुरूषों को एक सूत्र में पिरोया जाये जो एक नये विश्व के आगमन के लिये समर्पित हैं, वे चाहे किसी भी राष्ट्र, संप्रदाय या धर्म के क्यों न हों ।

श्रीअरविन्द-सोसायटी के सदस्य और केंद्र:

भारत और विश्व भर में श्रीअरविन्द-सोसायटी के अनेक सदस्य, केंद्र और शाखाएं हैं । सदस्यता की कई श्रेणियां हैं, आप एक वर्ष के लिए भी सदस्य बन सकते हैं या फिर कई वर्षों के लिए । संस्थाएं भी इसका सदस्य बन सकती हैं ।

श्रीअरविन्द-सोसायटी के केंद्र और शाखाएं मुख्यतः साधना और भगवान् की सेवा के केंद्र होंगे । सेवा के विविध रूप हैं । कुछ केंद्रों के निजी फार्म, विद्यालय, कुटीर-उद्योग हैं जिन्हें वे आदर्श संस्थाएं बनाने के प्रयास में हैं । अधिकतर केंद्र ध्यान और स्वाध्याय गोष्ठियां करते हैं । एक नयी विश्व-व्यवस्था, मानव एकता और विश्व संस्कृति पर नियमित गोष्ठियां, सभाएं, प्रदर्शनियां और सांस्कृतिक कार्यक्रम होते हैं | स्वाध्याय-शिविर, युवा-शिविर और प्रशिक्षण-सत्र भी आयोजित किये जाते हैं।

श्रीअरविन्द-सोसायटी की कुछ एक गतिविधियां:

श्रीअरविन्द-सोसायटी संसार की कई भाषाओं में पुस्तकें, पुस्तिकाएं और संवाद-पत्र प्रकाशित करती है । योग और साधना संबंधी पुस्तकों के अतिरिक्त सर्वजन की रूचि के लिये भारत, शिक्षा, बच्चों, प्रकृति और फूलों संबंधी विषयों पर भी एक अधिक गहरे दृष्टिकोण को लेकर पुस्तकें प्रकाशित की जाती हैं ।

श्रीअरविन्द-सोसायटी वीडियो कैसेट, औडियो कैसेट तथा स्लाइड भी तैयार करती है जिससे केंद्रों और सदस्यों को आत्म-विकास, सामाजिक रूपांतरण और मानव एकता के लिये अपने प्रयास में सहायता मिल सके ।

शिक्षण-उपकरण, खेल-कूद, खिलौनों, भारतीय-संस्कृति, चेतना द्वारा प्रबंधन, स्वास्थ, अप्रचलित ऊर्जा-स्रोतों, समुचित प्रौद्योगिकी, जड़ी-बूटी से तैयार औषधियों, जैव-ऊर्जा तथा सर्वाधिक महत्वपूर्ण मनुष्य की प्रसुप्त क्षमताओं के जागरण के लिए शोध-कार्य किये जा रहे हैं ।

'ऑरो सर्विस' के द्वारा सच्चाई, सेवा और आध्यात्मिकता पर आधारित आर्थिक ढांचे के निर्माण का प्रयास किया जा रहा है ।

युवा-परिषद् और महिला-परिषद् द्वारा यह प्रयत्न किया जा रहा है कि युवाओं और महिलाओं में जाग्रति उत्पन्न हो और उनकी शक्ति को एक नयी समाज-व्यवस्था के निर्माण की ओर मोड़ा जाये । दोनों ही परिषदें मासिक पत्रिकाओं का प्रकाशन कर रही हैं ।

भारत में और भारत के बाहर नियमित रूप से सम्मेलन, विचार गोष्ठियां, स्वाध्याय-शिविर, शिक्षा-शिविर, युवा-शिविर तथा महिला-शिविर आयोजित किये जाते हैं ।

प्रतीक-चिन्ह

श्रीअरविन्द का प्रतीक

अवरोहणात्मक त्रिभुज सत-चित-आनन्द का द्योतक है ।

आरोहणात्मक त्रिभुज जीवन, प्रकाश और प्रेम के प्रत्युत्तर का घोतक है।

दोनों का मिलन स्थल - केंद्रीय चतुष्कोण - पूर्ण अभिव्यक्ति है जिसके केंद्र में है कमल - परम पुरुष का अवतार, चतुष्कोण के बीच - पानी - विविधता, सृष्टि का प्रतिनिधित्व करता है।

श्रीमाँ का प्रतीक

मध्यवर्ती वृत्त भागवत चेतना का घोतक है ।

चार पंखुड़ियां, श्रीमाँ की चार शक्तियों की प्रतिनिधि हैं ।

बारह दल, श्रीमाँ की उनके कार्य के लिये अभिव्यक्त द्वादश शक्तियों के घोतक हैं ।

श्रीअरविन्द-सोसायटी का प्रतीक

यह श्रीअरविन्द के प्रतीक जैसा ही होता है परंतु दोनों त्रिभुजों के शिरोबिंदु जोड़ दिए जाते हैं जिससे इसे हीरे का रूप मिल जाता है |

श्री अरविन्द के अनुसार हीरा श्रीमाँ के सघनतम प्रकाश का प्रतीक है ।